संदेश संख्या – १५०

यूरोपीय देशों में हाल में हुए कार्यक्रमों के दौरान घटी कुछ घटनाएँ

१. शिवेन्दु के बारे में जिज्ञासा के कारण एक परिवार द्वारा रात्रि–भोज पर कुछ लोगों को निमन्त्रित किया गया किन्तु उन्हें शिवेन्दु के कार्य में कोई विशेष रुचि नहीं थी ।

बाईबिल की प्रतीकात्मक कहानी में, 'मूल पाप' निषिद्ध फल का खाया जाना नहीं बल्कि मूर्खतापूर्ण जिज्ञासा है । जिज्ञासा ही वह विभेदकारी (शैतानी) चित्तवृत्ति है जो स्वर्गीक दिव्यता अर्थात् अविभाजित आनन्दमयी सजगता से पतन का कारण है । इसी कारण, मानवता परम पवित्र से वियुक्त हो गई है और दुःख एवं शोक मानवजाति की विशिष्ट पहचान बन गई हैं । हम देख सकते हैं कि जिज्ञासा घटिया और जटिल अहंकार से उत्पन्न होती है जो कि उधारी अवधारणाओं, निष्कर्षों, अनुमानों, कल्पनाओं, प्रभावों, भ्रांतियों, दावा और दंभ से परिपूर्ण है और इसी से सभी प्रकार के द्वन्द्व, भ्रांति और वाध्यताओं का जन्म होता है ।

समझदारी की पवित्र ऊर्जा, कालातीत अस्तित्व की अन्तर्यात्रा के सम्बन्ध में गहरे अनुसन्धान एवं खोज अर्थात् स्वाध्याय से उत्पन्न होती है और साथ ही यह बाहरी दुनिया के कालबद्ध जीवन से भी उत्पन्न हो सकती है बशर्ते कि उसमें अहंकार का हस्तक्षेप न हो । समझदारी समन्वय है जबकि जिज्ञासा अराजकता। समझदारी दिव्यता का नृत्य है जबकि जिज्ञासा केवल मानसिक शंकाओं एवं निरर्थक इच्छाओं को जन्म देती है।

अतः उस रात्रि सह–भोज में शिवेन्दु ने संक्षेप में कुछ बातें कहीं । किन्तु किसी ने नहीं सुना । वे बोतलों से शराब निकालकर एक–दूसरे को देने में व्यस्त रहे और जब उन्होंने देखा कि शिवेन्दु उस प्रक्रिया में भाग नहीं ले रहा है तब मदिरापान हेतु उत्तेजक, मनोरंजक एवं युक्तिपूर्ण औचित्य प्रस्तुत किया जाने लगा और यह बताया गया कि मदिरा दवा के रूप में भी ली जाती है ।

शराब का किण्वन तथा मनुष्य जाति की चेतना में स्थित विभाजनों का मजबूतीकरण एक ही है । प्रकाश के बारे में बात करने से अंधे को दृष्टि नहीं मिलती । अतः शिवेन्दु केवल चुप रहा ।

शिवेन्दु का आनन्द वास्तविक और अनन्त है जिसे मदिरापान के द्वारा जीवन से पलायन कर नहीं पाया जाता । अपना भय, लोभ, ईर्ष्या और मूर्खताओं के परिणाम को समझने एवं नियन्त्रित करने की क्षमता के सम्बन्ध में मनुष्य जाति की दयनीय स्थिति है । वह स्वयं को ''मेरा भगवान'', ''मेरा देश'', ''मेरी भाषा'', ''मेरी संस्कृति'', ''मेरा परिवार'', ''मेरा घर'', ''मेरा गुरू'' इत्यादि की बीमारी से मुक्त नहीं कर सकती ।

२. विशाल 'काला सागर' जिसके पीछे सुन्दर पर्वत–श्रृंखला स्थित है, के सामने शिवेन्दु वर्ना (बुल्गारिया) के भक्तों के साथ बात कर रहा था। उनमें से एक ने पूछा : कैसे यह छुद्र भ्रांति ''मैं'' हमारे शरीर में उपलब्ध अनन्त चैतन्य को ढँक लेता है ? कैसे यह अहंकारी ''मैं'' समझदारी की ऊर्जा (चिति–शक्ति) जो पहले से ही हमें प्राप्त है, को रोक देता है ? कैसे यह धोखा ''मैं'' परम पवित्र को आवृत्त कर लेता है ?

कुछ सूक्ष्म धूलकण तुम्हारी आँखों में पड़कर तुम्हें यहाँ स्थित विशाल समुद्र और बड़े पर्वत श्रृंखला को नहीं देखने देते । उसी तरह, तुम्हारी चेतना में मिथ्या विभाजन निश्चित रूप से मानव सजगता की असीम दिव्यता को ढँक लेता है ।

३. बुल्गारिया के ऑर्थोडॉक्स चर्च के एक बड़े पुजारी शिवेन्दु से मिलने आये और उन्होंने कुछ अप्रत्याशित रूप से कहा–ईसाई मानते हैं कि ईश्वर बहुत दूर स्वर्ग में है और उन तक पहुँचने के लिए तुम्हें अत्यधिक प्रयत्न, संघर्ष और दुःख से गुजरना होगा । साम्यवादी कहते हैं कि दिव्यता का परमानन्द यहीं है, बहुत नजदीक है और चारों तरफ है । केवल विभाजनों से मुक्ति और मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण की समाप्ति भर की देरी है ।

केवल एक पूर्ववर्ती साम्यवादी देश का पुजारी ही शायद ऐसी गहरी बात कह सकता है । लेकिन फिर क्या गलत हो गया – साम्यवादी देशों में? बड़ा ''मैं'' (अहंकार) जो साम्यवाद के आदर्शों को नृशंसतापूर्वक लागू कराता है, वही वहाँ सबसे बड़ा विभाजन और द्वन्द्व उत्पन्न करता है और इस तरह विभिन्न नामों के झंडा तले वर्ग भेद एवं शोषण जारी है । इसी कारण स्वर्ग का वांछित परमानन्द खो गया । पुरोहित वर्ग ने चालाकियों एवं धूर्त्ततापूर्ण व्यवसाय के माध्यम से पुनः मनुष्य जाति पर अपना नियन्त्रण स्थापित कर लिया है और भगवत्ता को दूर भगा दिया है ।

कार्य के केन्द्र में जहाँ भी विभेदकारी ''मैं'' अर्थात् चित्तवृत्ति होती है वहाँ अन्ततोगत्वा विनाश होना तय है और जहाँ निर्मन अर्थात् चैतन्य केन्द्र में होता है, वहीं पवित्र रामराज्य होता है ।

।। जय रामराज्य ।।